* राजनीतिक चिन्तन में न्याय की धारणा की विवेचना कीजिए?

पाश्चात्य और पूर्वीय, दोनों ही राजनीतिक दर्शनों में न्याय की धारणा को बहुत अधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। न्याय न केवल राजनीतिक, नैतिक चिन्तन का भी एक अनिवार्य अंग और बहुत अधिक महत्वपूर्ण आधार है।

पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन में न्याय का अध्ययन प्लेटो की विचारधारा से प्रारम्भ किया जा सकता है। प्लेटो के प्रसिद्ध ग्रन्थ रिपब्लिक (Republic) का सबसे अधिक महत्वपूर्ण विषय न्याय की प्रकृति और उसके निवास की खोज करना ही है। रिपब्लिक में उसकी इस न्याय सम्बन्धी धारणा को इतना प्रमुख स्थान प्राप्त है कि रिपब्लिक का उपशीर्षक न्याय से सम्बन्धित (concerning Justice) रखा गया है। एबेन्स्टीन (Ebenstein) लिखते हैं कि प्लेटो के न्याय सम्बन्धी विवेचन में उसके राजनीतिक दर्शन के समस्त तत्व शामिल हैं।

प्लेटो ने न्याय शब्द का प्रयोग वैधानिक अर्थ में नहीं वरन् नैतिक अर्थ में किया है। उनके द्वारा न्याय शब्द का प्रयोग धर्म (लौकिक धर्म) के पर्यायवाची अर्थ (क्रिया) में किया गया है। प्लेटो का कहना है कि न्याय मानव आत्मा की उचित अवस्था और मानवीय स्वभाव की प्राकृतिक माँग है। प्लेटो न्याय के दो रूपों का वर्णन करता है, व्यक्तिगत न्याय और सामाजिक या राज्य से सम्बन्धित न्याय।

प्लेटो की धारणा थी कि मानवीय आत्मा में तीन तत्व या अंश मौजूद है - इन्द्रिय तृष्णा या इच्छा तत्व (Appetite) शौर्य (Spirit) और बुद्धि (Wisdom) इन तीनों तत्वों के प्रतिनिधि के रूप में राज्य के तीन वर्ग होते हैं, जिन्हें क्रमश: शासक वर्ग, सैनिक या रक्षक वर्ग और उत्पादक या सेवक वर्ग कहा जाता है। प्लेटो का कहना है कि समाज अथवा राज्य समाज की आवश्यकता और व्यक्ति की योग्यता को दृष्टि में रखते हुए प्रत्येक व्यक्ति के लिए कुछ कर्तव्य निश्चित करते हैं और प्रत्येक व्यक्ति द्वारा सन्तोषपूर्वक अपने अपने कर्तव्य का पालन करना ही न्याय है। प्लेटो के न्याय सिद्धान्त के सम्बन्ध में बार्कर के विचार हैं न्याय का अर्थ है प्रत्येक व्यक्ति द्वारा उस कर्तव्य का पालन जो उसके प्राकृतिक गुणों और सामाजिक स्थिति के अनुकूल है। नागरिक की अपने धर्म की चेतना तथा सार्वजनिक जीवन में उसकी अभिव्यंजना ही राज्य का न्याय है।

प्लेटो के समान अरस्तु भी राज्य के लिए न्याय को बहुत महत्वपूर्ण मानता है, लेकिन अरस्तु ने न्याय की धारणा का प्रतिपादन प्लेटो से भिन्न रूप में किया है। अरस्तु ने न्याय के दो भेद माना है। (i) वितरणात्मक राजनीतिक न्याय (Distributive Justice) (ii) सुधारक न्याय (Corrective or Rectificatory Justice) वितरणात्मक न्याय का

सिद्धांत यह है कि राजनीतिक पदों की प्राप्ति नागरिकों की योग्यता और उनके द्वारा राज्य के प्रति की गयी सेवा के अनुसार हो। सुधारक न्याय का तात्पर्य यह है कि एक नागरिक के दूसरे नागरिक के साथ सम्बन्धों को निर्धारित करते हुए सामाजिक जीवन को व्यवस्थित रखा जाय।

भारतीय राजनीतिक चिन्तन में न्याय (Justice in Indian political Thought) — भारत के प्राचीन राजनीतिक चिन्तन में न्याय को बहुत अधिक महत्व दिया गया है और मनु, कौटिल्य, बृहस्पति, शुक्र, नारद्राज तथा सोमदेव आदि सभी के द्वारा राज्य की व्यवस्था में न्याय को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इस सम्बन्ध में भारतीय राजनीतिक चिन्तों की विशेषता यह रही है कि उन्होंने प्राचीन युग में भी न्याय की उन कानूनी धारणा को अपना लिया था जिसे पश्चिम के राजनीतिक चिन्तक आधुनिक युग में ही अपना सके। इस सम्बन्ध में मनु और कौटिल्य के विचारों का उल्लेख विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। मनु की दूरदृष्टि उस बात से है कि उन्होंने प्राचीन युग में भी विवादों की दो श्रेणियां बतला दी थी, जिन्हें आज दीवानी और फौजदारी की संज्ञा दी जाती है। मनु ने न्याय की निष्पक्षता और सत्यता पर अधिक बल दिया है। एक स्थान पर वे लिखते हैं। जिस सभा (न्यायालय) में सत्य असत्य से पीड़ित होता है उसके सदस्य ही पाप से नष्ट हो जाते हैं।

कौटिल्य, समुचित न्याय प्रणाली को राज्य का प्राण समझता है और उसका विचार है कि जो राज्य अपनी प्रजा को न्याय प्रदान नहीं कर सकता वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। उसके अनुसार न्याय का उद्देश्य प्रजा के जीवन तथा सम्पत्ति की रक्षा करना तथा असामाजिक तत्वों एवं अव्यवस्था उत्पन्न करने वाले व्यक्तियों को दण्डित करना है। कौटिल्य अपने अर्थशास्त्र में दो प्रकार के न्यायालयों का उल्लेख करता है - धर्मस्थीय तथा कण्टक शोधन, जिन्हें वर्तमान समय के दीवानी तथा फौजदारी न्यायालयों के लगभग समान कहा जा सकता है। उसके द्वारा न्यायिक संगठन और प्रक्रिया का भी विशद वर्णन किया गया है।

1. → न्याय की धारणा :- Concept of Justice.

न्याय समाज दर्शन की एक ऐसी बुनियादी धारणा है, जिस पर सामाजिक चिंतन के प्रारम्भ से ही विचार होता रहा है। इतिहास में न्याय की अनेक प्रकार से व्याख्या हुई है। कभी उसे नैतिकता, वैधानिकता का पर्याय माना जाता रहा, तो कभी ईश्वर की इच्छा और पूर्व जन्म के कार्यों का फल। आधुनिक न्यायशास्त्र में न्याय का अर्थ सामाजिक जीवन की वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति के कल्याण का समाज व्यापक कल्याण के साथ समन्वय

इस व्यापक कल्याण की सिद्धि, जो व्यक्तियों के अलग अलग कल्याण से भिन्न हो,
बहुमत तर्क के कल्याण से भिन्न है -न्याय की धारणा के प्रमुखतया दो आधार है।

स्वतन्त्रता और समानता।
न्याय धारणा के विविध रुप (various of the Concept of Justice)

परम्परागत रूप में न्याय की दो धारणाएँ रही है- नैतिक और कानूनी लेकिन आज की स्थिति में न्याय ने बहुत अधिक व्यापकता प्राप्त कर ली है और आज कानूनी या राजनीतिक न्याय की अपेक्षा भी सामाजिक और आर्थिक न्याय अधिक महत्वपूर्ण हो गये है। न्याय धारणा के इन विविध रूपों का उल्लेख निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

(i) नैतिक न्याय (Moral Justice) परम्परागत रूप में न्याय की धारणा की धारणा को नैतिक रूप में ही अपनाया जाता रहा है। नैतिक न्याय इस धारणा पर आधारित है कि विश्व में कुछ सर्वव्यापक अपरिवर्तनीय तथा अंतिम प्राकृतिक नियम है जो कि व्यक्तियों के आपसी सम्बन्धों को ठीक प्रकार से सन्चालित करते है। इन प्राकृतिक नियमों और प्राकृतिक अधिकारों पर आधारित जीवन व्यतीत करना ही नैतिक न्याय है। जब हमारा आचरण इन नियमों के अनुसार होता है तब वह नैतिक न्याय की अवस्था होती है।

न्याय है: ~~जब हमारा आचरण इन नियमों और प्राकृतिक अधिकारों पर आधारित उचित अनुचित~~ जब हमारा आचरण इन नियमों के अनुसार होता है, तब वह नैतिक न्याय की अवस्था होती है। जब हमारा इसके विपरीत होता है, तब वह नैतिक न्याय के विरुद्ध होता है।

(2) कानूनी न्याय (Legal Justice): राज्य के उद्देश्यों मे न्याय को बहुत अधिक महत्व दिया गया है और कानूनी भाषा मे समस्त कानूनी व्यवस्था को न्याय व्यवस्था कहा जाता है। कानूनी न्याय मे वे सभी नियम और कानूनी व्यवहार सम्मिलित है, जिनका अनुसरण किया जाना चाहिए। इस प्रकार कानूनी न्याय की धारणा दो अर्थों मे प्रयोग की जाती है। (i) कानूनों का निर्माण अर्थात सरकार द्वारा बनाये गये कानून न्यायोचित होने चाहिए। (ii) कानूनों को लागू करना अर्थात बनाये गऐ कानूनों को न्यायोचित ढंग से लागू किया जाना चाहिए।

(3) राजनीतिक न्याय (Political Justice): राज व्यवस्था का प्रभाव समाज के सभी व्यक्तियों पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप मे पड़ता ही है। अतः सभी व्यक्तियों को ऐसे अवसर प्राप्त हो

चाहिए कि वे राज-व्यवस्था को लगभग समान रूप से प्रभावित कर सके और राजनीतिक शक्ति का प्रयोग ऐसे ढंग से किया जाना चाहिए कि सभी व्यक्तियों को लाभ प्राप्त हो सके। राजनीतिक न्याय है और इसकी प्राप्ति स्वाभाविक रूप से एक प्रजातान्त्रिक व्यवस्था के अन्तर्गत ही की जा सकती है। प्रजातान्त्रिक व्यवस्था के साथ-साथ राजनीतिक न्याय की प्राप्ति के कुछ अन्य साधन हैं- वयस्क मताधिकार, सभी व्यक्तियों के लिए विचार, भाषण, सम्मेलन और संगठन आदि की नागरिक स्वतन्त्रताएँ, प्रेस की स्वतन्त्रता, न्यायपालिका की स्वतन्त्रता, बिना किसी भेदभाव के सभी व्यक्तियों को सार्वजनिक पद प्राप्त होना, आदि।

(4) सामाजिक न्याय (Social Justice) - सामाजिक न्याय का मतलब यह है कि नागरिक के बीच में सामाजिक स्थिति के आधार पर किसी प्रकार का भेद न माना जाय और प्रत्येक व्यक्ति को आत्म-विकास के पूर्ण अवसर प्राप्त हो। सामाजिक न्याय की धारणा में यह बात निहित है कि अच्छे जीवन के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ व्यक्ति को प्राप्त होनी चाहिए और इस सन्दर्भ में समाज राजनीतिक सत्ता से यह आशा करता है कि वह अपने विधायी तथा प्रशासनिक कार्य द्वारा एक ऐसे समाज की स्थापना करेगा, जो समानता पर आधारित हो।

वर्तमान समय में सामाजिक न्याय का विचार बहुत अधिक लोकप्रिय है और सामाजिक न्याय पर बल देते हैं। इस सम्बन्ध में श्री नेहरू ने एक बार यह ठीक ही कहा था कि लाखों-करोड़ों लोगों के लिए मार्क्सवाद के प्रति आकर्षण का स्रोत उसका वैज्ञानिक सिद्धान्त नहीं है, वरन् सामाजिक न्याय के प्रति उसकी तत्परता है जिसे लिए लोग्राई यथार्थी बनाते हैं।

(5.) आर्थिक न्याय (Economic Justice) - आर्थिक न्याय सामाजिक न्याय का एक अंग है। कुछ लोग आर्थिक न्याय का तात्पर्य पूर्ण आर्थिक समानता से लेते हैं, किन्तु वास्तव में इस प्रकार की स्थिति व्यवहार के अन्तर्गत किसी भी रूप में सम्भव नहीं है। आर्थिक न्याय का तात्पर्य यह है कि सम्पत्ति सम्बन्धी भेद इतना अधिक नहीं होना चाहिए कि धन सम्पदा के आधार पर व्यक्ति-व्यक्ति के बीच विभेद की कोई दीवार खड़ी हो जाय और कुछ धनी व्यक्तियों द्वारा अन्य व्यक्तियों के श्रम का शोषण किया जाय उसके जीवन पर अनुचित अधिकार स्थापित कर लिया जाय। इसमें यह बात भी निहित है कि पहले समाज के सभी व्यक्तियों की अनिवार्य आवश्यकता पूरी होनी चाहिए।

आर्थिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार को सीमित किया जाना आवश्यक है।

भारतीय संविधान में राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक न्याय की व्यवस्था (Provision of Political Social and Economic Justice in India Constitution) :- भारतीय संविधान में न्याय के आदर्श की वही भूमिका है जो शरीर में आत्मा की होती है। संविधान निर्माताओं द्वारा इस तथ्य को समझा लिया गया है कि सच्चे लोकतन्त्र के लिए स्वतन्त्रता और समानता ही नहीं वरन् न्याय की भी आवश्यकता है क्योंकि न्याय के बिना स्वतन्त्रता और समानता के आदर्श बिल्कुल व्यर्थ हो जाते हैं। संविधान की प्रस्तावना में सभी नागरिकों को राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक न्याय प्रदान करना संविधान का लक्ष्य घोषित किया गया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनेक कदम भी उठाये गये हैं। सर्वप्रथम राजनीतिक न्याय की प्राप्ति के लिए लोकतान्त्रिक व गणतान्त्रिक व्यवस्था को अपनाया गया है और संविधान के अनुच्छेद 19 द्वारा नागरिकों को 6 स्वतन्त्रताएं प्रदान की गयी हैं।

भारतीय संविधान में सामाजिक न्याय के आदर्श को अनेक रूपों में स्वीकार किया गया है। संविधान के तीसरे भाग (मौलिक अधिकार) और चौथे भाग (राज्य की नीति के निदेशक तत्व) में सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए विविध उपायों का उल्लेख किया गया है।

Scanned with CamScanner

अनुच्छेद 14 - भारत के सभी नागरिकों को कानून के समक्ष समानता और कानूनों से समान सुरक्षा प्रदान की गयी है।
अनुच्छेद 15 - मे धर्म, कुल, वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेद - भाव की मनाही की गयी है।
अनुच्छेद 16 - के द्वारा राज्य के अधीन पदों पर नियुक्ति के सम्बन्ध मे सब नागरिक को अवसर की समानता प्राप्त है।
अनुच्छेद 17 - द्वारा छुआछूत का तथा अनुच्छेद 23, 24 द्वारा बेगार व शोषण का अन्त कर दिया गया है। संविधान के द्वारा अनुच्छेदों सामाजिक न्याय के मार्ग मे आने वाली बाधाओं को दूर किया गया है।

The End

Scanned with CamScanner